P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4* (Part-1) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

हरिशंकर परसाई एवं शरद जोशी की व्यंग्य यात्रा

आलोक मिश्र
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,
हिन्दी विभाग,
स्वामी शुकदेवानन्द
स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
शाहजहाँपुर, उत्तर प्रदेश,

सारांश

हिन्दी की विविध विधाओं में व्यंग्य एक महत्त्वपूर्ण विधा है। व्यंग्य को साहित्य की ज्ञानदृष्टि भी कहा जा सकता है क्योंकि यह साहित्य के माध्यम से समाज की विविध बुराइयों को खोंजकर हास्य की चासनी में लपेटकर परोसता है। समाज की ज्वलंत समस्याओं को पाठक के लिए आनन्द और पीड़ा का विषय साथ–साथ बना देना इसकी विशेषता है। व्यंग्य के क्षेत्र में हरिशंकर परसाई एवं शरद जोशी अत्यन्त ख्यातिलब्ध नाम हैं। इनके व्यंग्य समाज की विद्रूपताओं तथा विषंगतियों को वखूबी उघाड़कर रख देते हैं। प्रस्तुत शोधपत्र हरिशंकर परसाई एवं शरद जोशी की विकास यात्रा के संक्षिप्त विवेचन का एक प्रयास है।

मुख्य शब्द : व्यंग्य–उपहास, गुम्फित–गुथा हुआ, विद्रूप–बिगड़ा हुआ, आडम्बर – दिखावा, व्यंग्य सम्पदा–व्यंग्यपूर्ण साहित्य भण्डार।

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य में अनेक विधाओं का अपना वैभव और महत्त्व है। गद्य की विधाओं में व्यंग्य ने एक लम्बी यात्रा करते हुए अपना स्थान सुनिश्चित किया। आज व्यंग्य के क्षेत्र में खूब लिखा जा रहा है और पढ़ा भी जा रहा है। व्यंग्य की गुदगुदाहट और समस्यांकन पाठकों में इतना प्रिय हुआ कि आज व्यंग्य सर्वाधिक पढ़ी जाने वाली विधा के रूप में प्रतिष्ठित हो रही है।

अध्ययन का उद्देश्य

व्यंग्य विधा में हरिशंकर परसाई और शरद जोशी का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। इनका प्रदेय निश्चित ही वन्दनीय है। अतः प्रस्तुत शोध पत्र में इन दोनों व्यंग्यकारों की व्यंग्य यात्रा का अध्ययन करना है।

हिन्दी साहित्य में व्यंग्य विधा साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा है जिसके द्वारा साहित्यकार समाज की विसंगतियों, कुरीतियों पर जोरदार प्रहार करता है। इस चोट से समाज मर्माहत तो होता ही है साथ ही व्यंग्य बाणों की पैठ दीर्घ प्रभावकारी होती है।

हिन्दी–व्यंग्य की यात्रा में अनेक साहित्यकार का योगदान है। सन् 1960 के बाद व्यंग्य के नए क्षेत्र उद्घाटित हुए है, यथा – मंत्री, नेता, संत, महंत आदि के हथकंडे। धीरे–धीरे इसके फलक का विस्तार होता है।

व्यंग्य विधा का सम्यक अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि व्यंग्य की व्युत्पत्ति व्यंजनाकृति से ध्वनित, गूढ़ एवं सूक्ष्म अर्थ से गुम्फित है। 'अण्ण' धातु में 'वि' उपसर्ग तथा 'यत' प्रत्यय जोड़ने से 'व्यंग्य' शब्द की व्युत्पत्ति होती है। 'अण्ण' धातु से व्याप्ति एवं विस्तार्थ है, जो शब्द के सामान्यर्थ से किसी अन्य विशिष्टता को उद्घाटित करता है। मुख्यतः इस शब्द का प्रयोग शब्द शक्तियों के अन्तर्गत ही हुआ है, इसलिए हिन्दी शब्दकोषों में जितने भी अर्थ उपलब्ध हैं, वे इसी अर्थ के द्योतक हैं।[1] 'वि+अंग' से स्वीकार की गई है।[2] नालन्दा विशाल शब्द सागर में 'शब्द' की व्यंजनावृत्ति से प्रकट होने वाले अर्थ को व्यंग्य की व्युत्पत्ति का उत्स माना गया है।''[3]

मानव जीवन के नैतिक मूल्यों के गिरने से जो विद्रूपता आई उसका उद्घाटन करना ही व्यंग्य का मूल विषय रहा। व्यंग्य ने हिन्दी साहित्य को बहुत कुछ दिया है। व्यंग्यकारों की साधना ने साहित्य में एक नई चेतना ला दी। इस चेतना ने बहुत गूढ़ विषयों को सहजता से उद्घटित कर पाठक को प्रभावित किया। व्यंग्य की यात्रा में कई पुरोधा कार्य करते रहे। इनमें हरिशंकर परसाई एवं शरद जोशी हमारे शोध पत्र का विषय है।

हरिशंकर परसाई

व्यंग्य विद्या के शीर्षस्थ व्यंग्यकार के रूप में परसाई जी की पहचान है। व्यंग्य और परसाई एक–दूसरे के पर्याय बन चुके हैं। परसाई रचनावली प्रकाशित होने के बाद भी परम्परागत विद्या लेखन के चौखटों को निरंतर

तोड़कर रचना कर रहे हैं। स्वातंत्र्योत्तर काल का समाज तथा मनुष्य की व्यवहारगत विसंगति परसाई के व्यंग्य साहित्य में प्राप्त होती है। इनका व्यंग्य सभी पाठकों को प्रभावित कर सोचने पर मजबूर करता है। व्यंग्य विधा के माध्यम से परसाई जी ने रूढ़ियों तथा अन्धविश्वास पर जोरदार आक्रमण किया है। इनकी रचनाओं में हमारे दैनिक जीवन के विषय मिलते हैं। अतः इनकी रचनाओं में एक ताजगी विद्यमान रहती है। मानवीय मूल्यों के विकास के विषय इनकी ग्रन्थ–सम्पदा में होते हैं। अतः इनके ग्रन्थों को और उन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। इनके ग्रन्थों की संची इस प्रकार हैं :–

क्र0	ग्रन्थ	प्रकाशन वर्ष
1.	हँसते हैं रोते हैं	1956
2.	तब की बात और थी	1956
3.	भूत के पाँव पीछे	1962
4.	जैसे उनके दिन फिरे	1963
5.	बेईमानी की परत	1965
6.	सुनो भाई	1965
7.	पगडंडियों का जमाना	1966
8.	सदाचार का ताबीज	1967
9.	उल्टी सीधी	1968
10.	और अन्त में	1968
11.	निठल्ले की डायरी	1968
12.	ठिठुरता हुआ गणतंत्र	
13.	शिकायत मुझे भी है	1970
14.	अपनी–अपनी बीमारी	1972
15.	वैष्णव की फिसलन	1976
16.	मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ	1977
17.	एक लड़की पाँच दीवाने	1980
18.	विकलांग श्रद्धा का दौर	1981
19.	पाखण्ड का अध्यात्म	1982
20.	दो नाम वाले लोग	1983
21.	प्रतिनिधि व्यंग्य	1983
22.	तुलसीदास चन्दन घिसैं	1986
23.	कहत कबीर	1988
24.	हम इस उम्र से वाकिफ हैं	1987
25.	परसाई रचनावली–कुल खण्ड छः	1985

श्री हरिशंकर परसाई जी ने जबलपुर के 'प्रहरी' नामक पत्र में 'उदार' नाम से लेखन की शुरुआत की थी। बाद में वह पत्र पत्रिकाओं के नियमित स्तभ–लेखक के रूप में प्रसिद्ध हुए – 'और अन्त में' (कल्पना), 'सुनो भाई साधो' (नई दुनिया व नवीन दुनिया), 'कबिरा खड़ा बजार में' (सारिका 'मैं कहता आंखिन की देखी' (माया), 'माटी कहे कुम्हार से' (हिन्दी करंट), 'पाँचवाँ कालम' (नई कहानियाँ) और 'तुलसीदास चन्दन घिसैं' जैसे व्यंग्य स्तम्भों द्वारा परसाई ने व्यंग्य को व्यापक प्रचार–प्रसार दिया तथा लोकप्रिय बनाया। जनता की पीड़ा को आत्म पीड़ा बनाकर प्रस्तुत करने में श्री परसाई सिद्धहस्त हैं। इसे श्री कमलाप्रसाद जी 'कला के क्षेत्र में जनतन्त्रीकरण का प्रयास।''[4] मानते हैं।

परसाई जी ने इन व्यंग्य संकलनों में व्यंग्य–विधा को स्थापित कर कथ्य और शैली की दृष्टि से सशक्त किया है। आजादी से पूर्व यदि हिन्दुस्तान की स्थिति को देखना है तो प्रेमचन्द को पढ़ना है और यदि स्वतन्त्र हिन्दुस्तान देखना है तो परसाई पढ़ना है। इनके समूचे साहित्य के अध्ययन से ऐसा लगता है कि व्यंग्य उनके रग–रग में भरा हुआ है।

परसाई ने न केवल व्यंग्य को बल्कि साहित्य को भी एक नई दृष्टि दी है। सामाजिक तौर पर सुसम्पन्न किया है। यह उनके पाठकों की तादात से स्पष्ट होता है। भारत देश की विसंगतिपूर्ण, राजनीतिक, सामाजिक, प्रशासनिक, धार्मिक, साहित्यिक विषमताओं को परसाई ने बदलने के लिए ही लिखा है।

हरिशंकर परसाई ने साहित्यिक दलबन्दी, सामाजिक विद्रूपताएँ, संकुचित मनः प्रवृत्ति, धार्मिक आतंकवाद, प्रशासनिक भ्रष्ट कारोबार व्यक्तिपरक दोष आदि में व्याप्त प्रगति विरोधी मूल्यों की प्रवृत्तियों को अपना निशाना बनाया है।

परसाई में अनेक विशेषताएँ विद्यमान है। अन्य साहित्यकारों में 'पाठकों का तादात्म्य' मिलना मुश्किल है, लेकिन परसाई में यह सर्वत्र दिखाई देता है। सुरेश कुमार वर्मा इस सन्दर्भ में लिखते हैं कि ''पहली बार कोई लेखक बड़े व्यापक स्तर पर पाठक वर्ग से जुड़ सका है। पहली बार कोई लेखक पाठकों को मना पाया है कि वे कुटिल चालों, शोषकों के शिकार हैं और पहली बार कोई लेखक पाठकों से तादात्म्य स्थापित कर उनके धरातल पर चिन्ता और सोच को धारण कर सका है। सभी स्तरों पर लेखक और पाठक की आनुभूतिक समानता और एकता परसाई–लेखन की जबरदस्त विशेषता है।''[5]

साहित्य जगत में कल्पना, रम्यता को स्थान होता है, लेकिन परसाई के साहित्य में कल्पना ढूंढ़ने पर भी मिले ऐसा मुश्किल है। चरित्र–चित्रण को भी गहराई से यथार्थ रोजमर्रा जीवन के लिए है। भगवान सिंह ने लिखा है– ''परसाई की अधिकांश रचनाओं में एक खुला प्रहार है। यथास्थिति पर, व्यवस्था पर, प्राचीन रूढ़ियों पर संस्कारों पर और प्रायः रचनाओं में बदलते मूल्यों और क्रान्तिकारी शक्तियों और सम्भावनाओं के प्रति सम्मान है, उपेक्षित और शोषित वर्गों के प्रति सहानुभूति है और ढोंग का उद्घाटन है।''[6]

परसाई के व्यंग्य साहित्य के सन्दर्भ में श्याम कश्यप ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि ''व्यंग्य उनके गद्य के एक सहायक या गौण तत्व के रूप में नहीं, बल्कि उनके यथार्थवादी दृष्टिकोण और कलात्मक पद्धति में घुला–मिला उसके मूलाधार के रूप में आता है।''[7]

परसाई की समूचे व्यंग्य–संसार में राजनीतिक तथा सामाजिक व्यंग्यकार के रूप में विशेष ख्याति हैं। वे एक गम्भीर चिन्तक तथा समाजसेवक हैं। जीवन के विविध क्षेत्रों को स्पर्श करते हुए अपनी पैनी दृष्टि से विषमता, हीनता, दोष, असंगति, व्यभिचार, आडम्बर आदि पर प्रहार करते हैं। परसाई से व्यंग्य दूर करना यानि अपने शरीर से आत्मा को दूर करना है। ऐसे व्यंग्य–विधा के शिरोमणी की सर्जनशीलता का परिचय, एक प्रबन्ध में भी अधेरा महसूस होगा फिर भी मैंने संक्षेप में व्यंग्य–विधा के योगदान में परसाई का स्थान स्पष्ट करने का अत्यल्प प्रयास किया है।

शरद जोशी

व्यंग्य–विधा को सशक्त करने में हिन्दी संसार की यह बहुत बड़ी हस्ती है। शरद जोशी ने परसाई के समान जीवन के सभी क्षेत्रों से सम्बद्ध व्यंग्य लिखा है इसलिए हिन्दी के प्रथम कोटि के विख्यात व्यंग्यकारों में जोशी का नाम गौरव के साथ लिया जाता है। नुकीले, गहरे तथा तीखे व्यंग्य के लिए हिन्दी–साहित्य में विख्यात शरद जोशी की समग्र रचनाओं में राजनीति, समाज, साहित्य और प्रशासन की विकृतियों का पर्दाफाश है। किसी भी लेखक की श्रेष्ठता उसके पाठकों द्वारा प्रशंसित रचनाओं के संकलन से आंकी जाती है। अतः एक दृष्टि शरद जोशी की भिन्न भिन्न रचनाओं पर –

क्र0	ग्रन्थ	प्रकाशन वर्ष
1.	परिक्रमा	1958
2.	जीप पर सवार इल्लियाँ	1971
3.	रहा किनारे बैठ	1972
4.	तिलस्म	1978
5.	दूसरी सतह	1979
6.	पिछले दिनों	1980
7.	मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ	1981
8.	यथासम्भव	1985
9.	हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे	1987

शरद जोशी की व्यंग्य–सम्पदा इन संकलनों में संग्रहीत है। विसंगति की उर्वरा भूमि में व्यंग्य की पौध को खाद–पानी देने वालों में शरद जोशी की अन्यतम पहचान है। व्यंग्य–विधा को लब्ध–प्रतिष्ठा देने वालों में परसाई के समान शरद जोशी ने व्यंग्य को शैलीय तथा पाठकीय प्रसार देने में अपनी पहचान स्थापित की है। इसलिए डॉ0 बालेन्दु शेखर तिवारी ने 'हिन्दी–व्यंग्य विधा की शोभा यात्रा' में इस सन्दर्भ में लिखा है– ''हिन्दी–व्यंग्य में सम्प्रेषण की जितनी विविधताएँ उपलब्ध हैं, भाषा में जितना अनूठापन विद्यमान है, शिल्प की जितनी भंगिमाएँ मौजूद हैं– उन सबका समष्टि श्रेय शायद सबसे अधिक शरद जोशी को दिया जाता है।''[8]

हिन्दी के अन्य व्यंग्यकारों की तुलना में शरद जोशी की यह विशेषता है कि वे घटना के घटते ही अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से सम्बन्धित विसंगतियों को लेकर नया व्यंग्य उद्घाटित करते हैं। वे अक्सर फौरन गठित मसले को लेकर स्थितियाँ बदलने से पूर्व अपना रंग डाल देते हैं। देश–विदेश के कोने–कोने में जो घटना बनती है उससे क्षतिग्रस्त होकर वे अपना मंतव्य सदा प्रकट करते आये हैं।

शरद जोशी ने जब किसी एक विषय पर तीव्र व्यंग्य करना प्रारम्भ किया तो उसके माध्यम से अनेकानेक विषयों पर भी प्रहार किया है। अचेतन वस्तुओं को भी सचेतन बनाकर मानवीकरण से व्यंग्य किया है।

शरद जोशी का व्यंग्य–साहित्य विद्यमान भारतीय साहित्य समाज में क्रान्तिकारी बदलाव लाने के लिए संस्कार तथा प्रेरणा देता हैं उनके साहित्य ने गद्य की एक सक्षम विद्या को प्रतिष्ठा प्रदान की है। हिन्दी साहित्य के अन्य व्यंग्यकारों में दुर्लभ शैली की विविधता जोशी के समग्र साहित्य में उपलब्ध है। व्यंग्य में इस दृष्टि से इनका विशेष योगदान है। बातों ही बातों में पाठकों को आत्मविश्वास में लेकर पौराणिक कथा, ऐतिहासिक प्रसंगों से 'पराये पत्रों की सुगंध' जैसी रचना में व्यंग्यार्थ प्रस्तुत है। व्यंग्य–विधा को शिल्प की दृष्टि से स्थान देने वाले 'व्यंग्य शिल्पकार' के रूप में जोशी की छवि बनी हुई है। इन व्यंग्यों में शुक्ल जी की उक्ति चरित्रार्थ होती है – ''प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ करी जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है।''[9]

निष्कर्ष

हरिशंकर परसाई व्यंग्य के पुरोधा है। व्यंग्य उनके लेखन में सर्वत्र देखने को मिल जाता है और केवल व्यंग्य नहीं बल्कि श्रेष्ठ व्यंग्य देखने को मिलता है जो व्यंग्यकारों के लिए नज़ीर के कम नहीं होता है। 'भोलाराम का जीव', 'वैष्णव की फिसलन' जैसे अनेक व्यंग्य कालजयी व्यंग्य हैं।

व्यंग्य की परिधि को व्यापकता तथा पैनापन देने के लिए शरद जोशी ने खूब प्रयास किया है। एक जाग्रत व्यंग्यकार के रूप में शरद जोशी का हिन्दी–साहित्य सेवा में अनूठा स्थान है जिसको हिन्दी–जगत् कभी भूल न पाएगा। व्यंग्य को ज्ञान की, अध्ययन की दृश्य और श्रव्य पद्धति से गरिमा प्रदान करने के लिए आजकल भिन्न–भिन्न व्यंग्यपरक रचनाएँ प्रस्तुत कर आम जनता के घर–घर में व्यंग्य को दूरदर्शन के माध्यम से पहुँचाने का कार्य सबसे पहले शरद जोशी ने किया है। उसी राह पर आज का व्यंग्य सरपट दौड़ता चला जा रहा है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *वामन शिवराम आप्टे 'संस्कृत–हिन्दी कोश : पृ0 983*
2. *धीरेन्द्र वर्मा 'संस्कृत–हिन्दी कोश : भाग प्रथम पृ0 741*
3. *'नालन्दा विशाल' 'शब्द सागर : पृ0 1308*
4. *कमला प्रसाद (संपा0), 'परसाई रचनावली', भाग– 3 पृ0 – 7*
5. *'मधुमती', मई 1988, पृ0 – 3*
6. *'सर्वनाम', दिसम्बर, 1969, पृ0 20*
7. *कमला प्रसाद (संपा0), 'परसाई रचनावली', भाग–2, पृ0–3*
8. *डॉ0 बालेन्दु शेखर तिवारी, 'हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान', 1988, पृ0– 15*
9. *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', 2010, पृ0– 22*